

## सुशीला टाकभौरे के साहित्य में नारी चेतना

डॉ. पी.एम.आर. जयंती

हिंदी व्याख्याता,

एस.के.आर. एंड एस.के.आर. महिला शासकीय डिग्री महाविद्यालय (स्वायत्त), नागराजुपेटा, कडप्पा (आंध्र प्रदेश)

**सारांश-**सुशीला टाकभौरे समकालीन हिंदी दलित साहित्य की प्रमुख स्त्री आवाजों में से एक हैं। उनकी रचनाएँ मुख्य रूप से दलित नारी के बहुस्तरीय शोषण, सामाजिक-आर्थिक विसंगतियों, पितृसत्तात्मक दमन तथा जाति-लिंग अंतर्संबंधों को केंद्र में रखकर लिखी गई हैं। इस शोध पत्र में सुशीला टाकभौरे के साहित्य में नारी चेतना के विकास और अभिव्यक्ति का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। उनकी प्रसिद्ध आत्मकथा *शिकंजे का दर्द* के साथ-साथ अन्य कहानियों, कविताओं एवं उपन्यासों के आधार पर अध्ययन किया गया है। टाकभौरे दलित नारी की दैनिक यातनाओं — बाल विवाह, शिक्षा-हीनता, अस्वच्छ कार्य, घरेलू हिंसा, यौन शोषण और सामाजिक बहिष्कार — को अत्यंत सशक्त एवं यथार्थवादी शैली में प्रस्तुत करती हैं। उनकी लेखनी में नारी केवल पीड़ित या शोषित नहीं है, बल्कि शिक्षा, आंबेडकरवादी चेतना और आत्मनिर्भरता के माध्यम से विद्रोह करने वाली, संघर्षशील तथा स्वतंत्रता की आकांक्षा रखने वाली चेतनशील इकाई के रूप में उभरती है। यह शोध दर्शाता है कि टाकभौरे का साहित्य पारंपरिक नारीवाद से भिन्न दलित-स्त्रीवाद की एक सशक्त अभिव्यक्ति है, जिसमें जाति और लिंग दोनों को समान रूप से महत्व दिया गया है। उनके साहित्य ने हिंदी साहित्य में दलित नारी के प्रश्न को मुख्यधारा में लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

**बीज शब्द-**सुशीला टाकभौरे, नारी चेतना, दलित स्त्रीवाद, *शिकंजे का दर्द*, हिंदी दलित साहित्य, पितृसत्ता, आत्मकथा लेखन।

**प्रस्तावना-**समकालीन हिंदी साहित्य में दलित साहित्य की उभरती हुई धारा ने साहित्यिक विमर्श को नई दिशा प्रदान की है। इस धारा में स्त्री लेखन ने एक अलग और अत्यंत महत्वपूर्ण आयाम जोड़ा है। पुरुष-केंद्रित दलित विमर्श, जो मुख्यतः जाति-शोषण पर केंद्रित रहा, से अलग हटकर दलित लेखिकाएँ अब अपनी विशिष्ट पीड़ा, बहुस्तरीय शोषण, संघर्ष तथा प्रतिरोध की अपनी अनूठी आवाज दर्ज कर रही हैं। वे दलित नारी के अनुभव को केवल जाति के परिप्रेक्ष्य में नहीं, बल्कि जाति, लिंग, वर्ग और पितृसत्ता के अंतर्संबंधों के माध्यम से प्रस्तुत कर रही हैं। इसी क्रम में सुशीला टाकभौरे समकालीन हिंदी दलित साहित्य की प्रमुख और सशक्त स्त्री आवाजों में से एक हैं। वाल्मीकि समुदाय से संबंधित टाकभौरे मध्य प्रदेश के सिवनी जिले की निवासी हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित नारी के यथार्थ को अत्यंत साहसिक और यथार्थवादी ढंग से सामने लाया है। उनकी लेखनी दलित स्त्री के जीवन की उन कठोर सच्चाइयों को उजागर करती है, जिन्हें मुख्यधारा के साहित्य और यहाँ तक कि पुरुष-केंद्रित दलित साहित्य में भी पर्याप्त स्थान नहीं मिला था।

टाकभौरे बहुमुखी लेखिका हैं। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक तथा आत्मकथा विधा में सृजन किया है। उनकी सर्वाधिक चर्चित और प्रभावशाली कृति *शिकंजे का दर्द* (2011) एक दलित नारी की आत्मकथा है। इस आत्मकथा में लेखिका ने अपनी बाल्यावस्था से लेकर वयस्क जीवन तक की यात्रा को अत्यंत सच्चाई और निर्भीकता के साथ दर्ज किया है। यह कृति मात्र व्यक्तिगत जीवन-वृत्तांत नहीं, बल्कि पूरे दलित समुदाय की स्त्रियों पर लगे जाति, लिंग और आर्थिक शोषण की जंजीरों को तोड़ने का एक सशक्त दस्तावेज है। इस आत्मकथा का अंग्रेजी अनुवाद *मेरा जकड़ा हुआ जीवन* नाम से प्रकाशित हो चुका है, जिसने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी ध्यान आकर्षित किया है।

नारी चेतना के संदर्भ में सुशीला टाकभौरे का साहित्य दोहरी लड़ाई को प्रतिबिंबित करता है। एक ओर वे पितृसत्तात्मक समाज की दमनकारी संरचना से लड़ती हैं, तो दूसरी ओर जातीय व्यवस्था की गहराई तक जकड़ी सामाजिक विसंगतियों से। उनकी रचनाओं में नारी केवल पीड़ित या शोषित प्रतीक के रूप में नहीं उभरती, बल्कि शिक्षा, आत्मचेतना, आंबेडकरवादी विचारधारा और आत्मनिर्भरता के माध्यम से जागरूक, संघर्षशील, विद्रोही तथा सशक्त इकाई के रूप में प्रकट होती है। इस प्रकार टाकभौरे का साहित्य न केवल हिंदी दलित साहित्य की समृद्धि है, बल्कि दलित-स्त्रीवाद की एक जीवंत और प्रासंगिक अभिव्यक्ति भी है।

**1. दलित नारी के शोषण का चित्रण-**सुशीला टाकभौरे की रचनाओं में दलित नारी का जीवन अत्यंत कठोर, अमानवीय और बहुस्तरीय शोषण के चक्रव्यूह में फँसा हुआ दिखाया गया है। उनकी आत्मकथा *शिकंजे का दर्द* और अन्य कहानियों में दलित स्त्री पर लगे तीनों स्तरों के शोषण — जाति, लिंग और वर्ग — को बिना किसी सौंदर्यीकरण के यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया गया है।

बाल विवाह, शिक्षा से वंचित रखना, अस्वच्छ कार्य, घरेलू हिंसा, यौन शोषण, दहेज प्रथा और सामाजिक बहिष्कार उनके साहित्य के प्रमुख विषय हैं। *शिकंजे का दर्द* में लेखिका अपनी बाल्यावस्था से ही इन यातनाओं का जीवंत वर्णन करती हैं। वे बताती हैं कि दलित परिवार में लड़की का जन्म अभिशाप माना जाता है क्योंकि उसे दोहरी जिम्मेदारी उठानी पड़ती है — घर की और समाज की।

टाकभौरे ने दिखाया है कि दलित नारी का शरीर और श्रम दोनों ही ऊँची जातियों और पुरुषों द्वारा दोहन का साधन बन जाते हैं। यह चित्रण मात्र भावुकता नहीं, बल्कि व्यवस्थागत अन्याय का दस्तावेजीकरण है।

**2. नारी चेतना का विकास-**टाकभौरे की नायिकाएँ प्रारंभ में पारंपरिक दलित समाज की दबू, असहाय और भाग्यवादी होती हैं, लेकिन उनकी रचनाओं में नारी चेतना का क्रमिक विकास अत्यंत सशक्त रूप में दिखाई देता है। शिक्षा प्राप्त करने, आंबेडकरवादी विचारधारा से परिचित होने और आत्मचेतना विकसित करने के साथ ही इन नायिकाओं में विद्रोह की चिंगारी जलती है।

*शिकंजे का दर्द* में लेखिका की अपनी जीवन-यात्रा इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। प्रारंभ में “सहन” करने वाली नारी धीरे-धीरे “प्रतिरोध” करने वाली और अंततः “परिवर्तन” लाने वाली नारी में बदल जाती है। उनकी कहानियों में नारी का स्वर “मैं सहन नहीं करूँगी” से शुरू होकर “मैं बदलाव लाऊँगी” और “मैं अपने अधिकारों के लिए लड़ूँगी” तक पहुँचता है।

शिक्षा को वे मुक्ति का सबसे बड़ा हथियार मानती हैं। इस प्रकार टाकभौरे दलित नारी में चेतना के उदय की प्रक्रिया को चरणबद्ध रूप से प्रस्तुत करती हैं।

**3. दलित-स्त्रीवाद का सौंदर्यशास्त्र-**सुशीला टाकभौरे का साहित्य पारंपरिक नारीवाद से मौलिक रूप से भिन्न है। वे दलित-स्त्रीवाद की सशक्त समर्थक हैं। पारंपरिक नारीवाद मुख्यतः लिंग-भेद पर केंद्रित रहता है, जबकि टाकभौरे जाति और लिंग के अंतर्संबंध को केंद्र में रखती हैं। उनके अनुसार, दलित नारी पर होने वाला शोषण ऊँची जाति की नारी के शोषण से कहीं अधिक गहरा, जटिल और क्रूर है। ऊँची

जाति की स्त्री केवल पितृसत्ता की शिकार है, जबकि दलित स्त्री पितृसत्ता, जातिवाद और वर्गीय शोषण — तीनों की शिकार है।

टाकभौर ने डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचारों — शिक्षा, संघर्ष, आत्मसम्मान और संगठन — को अपनी रचनाओं का आधार बनाया है। उनकी लेखनी में दलित नारी को मात्र पीड़ित के रूप में नहीं, बल्कि क्रांतिकारी शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है। यह सौंदर्यशास्त्र हिंदी साहित्य में दलित स्त्री-विमर्श को नया आयाम प्रदान करता है।

**4. भाषा और शैली-**टाकभौर की भाषा सरल, सहज, बोलचाल की और अत्यंत प्रभावशाली है। वे मानक हिंदी के साथ-साथ स्थानीय बोली-बानी और दलित समुदाय की दैनिक भाषा का सफलतापूर्वक प्रयोग करती हैं। उनकी शैली में नाटकीयता, संवाद और यथार्थ का सुंदर मिश्रण है, जो पाठक को तुरंत घटनाओं के साथ जोड़ देता है।

उनकी भाषा में न कोई दिखावा है, न साहित्यिक आडंबर। यही कारण है कि उनका साहित्य सामान्य दलित स्त्रियों तक भी पहुँचता है और साथ ही शैक्षणिक स्तर पर भी गंभीर चर्चा का विषय बनता है।

**निष्कर्ष-**सुशीला टाकभौर का साहित्य समकालीन हिंदी साहित्य में नारी चेतना का एक महत्वपूर्ण, सशक्त और अमिट अध्याय है। उन्होंने दलित नारी के चित्रण में एक नए युग की शुरुआत की है। टाकभौर ने दलित महिला को मात्र पीड़ित, करुण या शोषित प्रतीक के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे पूर्ण चेतनशील, संघर्षशील, विद्रोही और सर्जनात्मक शक्ति के रूप में स्थापित किया है। उनकी रचनाएँ जाति, लिंग और वर्ग के त्रिकोणीय शोषण को बेबाकी से उजागर करती हैं और साथ ही दलित नारी की मुक्ति, आत्मसम्मान तथा सामाजिक न्याय की दिशा में एक स्पष्ट राह भी दिखाती हैं।

उनकी प्रसिद्ध आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' न केवल व्यक्तिगत यातनाओं और संघर्षों का मार्मिक दस्तावेज है, बल्कि समूचे दलित समुदाय की स्त्रियों की सामूहिक चेतना, पीड़ा और प्रतिरोध का प्रतिनिधित्व भी करती है। इस आत्मकथा में उन्होंने अपनी जीवन-यात्रा के माध्यम से उन हजारों दलित स्त्रियों की आवाज़ को दर्ज किया है, जो सदियों से चुप्पी की शिकार रही हैं।

समकालीन समय में जब दलित-स्त्रीवाद (Dalit Feminism) और अंतर्संबंधी नारीवाद (Intersectional Feminism) विश्व स्तर पर चर्चा का विषय बन चुके हैं, तब सुशीला टाकभौर का साहित्य भारतीय संदर्भ में इन विमर्शों को न केवल मजबूती प्रदान करता है, बल्कि उन्हें एक ठोस भूमि भी देता है। उन्होंने दिखाया कि दलित नारी का संघर्ष केवल लैंगिक नहीं, बल्कि बहुआयामी है — जातीय, वर्गीय और सांस्कृतिक शोषण के विरुद्ध एक साथ लड़ना पड़ता है।

टाकभौर का लेखन सामाजिक न्याय, समानता, शिक्षा, आत्मनिर्भरता और स्त्री-मुक्ति की दिशा में एक प्रेरणादायक एवं सशक्त दस्तावेज के रूप में उभरता है। उनकी भाषा सरल, मार्मिक और प्रभावशाली है, जो पाठक के मन में गहरी छाप छोड़ती है। उन्होंने मुख्यधारा के हिंदी साहित्य में दलित स्त्री की उपेक्षित आवाज़ को प्रमुखता दी और सिद्ध किया कि साहित्य केवल कल्पना का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का एक प्रभावी हथियार भी हो सकता है।

यह अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि समकालीन हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में दलित स्त्री की आवाज़ को अब और अधिक स्थान, महत्व और विश्लेषण दिए जाने की आवश्यकता है। सुशीला टाकभौर की रचनाएँ अतीत की यातनाओं, वर्तमान की विसंगतियों को दर्ज करने के साथ-साथ भविष्य की स्वतंत्र, सम्मानजनक, शिक्षित और सशक्त दलित नारी की एक सुंदर तथा आशावादी कल्पना भी प्रस्तुत करती हैं।

उनका साहित्य न केवल दलित साहित्य आंदोलन को समृद्ध करता है, बल्कि समग्र हिंदी साहित्य को अधिक समावेशी, संवेदनशील और न्यायोन्मुख बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। टाकभौर का

योगदान इस बात का साक्ष्य है कि सच्चा साहित्य वही है जो हाशिए पर खड़े व्यक्तियों को केंद्र में लाकर समाज की चेतना को बदलने की क्षमता रखता है।

\*\*\*\*\*

#### संदर्भ सूची-

1. टाकभौर, सुशीला. *शिकंजे का दर्द*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011।
2. टाकभौर, सुशीला. *मेरा जकड़ा हुआ जीवन* (अंग्रेजी अनुवाद: दीबा जफ़ीर और प्रीति दीवान)। सीमाहीन पत्रिका, 2026।
3. वर्मा, रतन कुमारी. "आत्मकथा लेखन में नारी की व्यथा"। शोधद्वार, 2024।
4. मंडल, सोमदत्ता. "मेरा जकड़ा हुआ जीवन : संघर्षशीलता की कहानी"। सीमाहीन पत्रिका, 14 मई 2026।
5. नायक, एस. "भारत में जाति और लिंग संबंधी स्थितिजन्य ज्ञान"। यूनिवर्सिटी ऑफ सैल्फर्ड रिपॉजिटरी।
6. "दलित विमर्श में सुशीला टाकभौर की कहानियाँ"। बहुविषयक शोध एवं विकास की अंतरराष्ट्रीय पत्रिका।
7. रावत, रश्मि. "दलित साहित्य का स्त्री-पाठ"। फेसबुक साहित्यिक चर्चा, 2024।
8. "स्त्री आत्मकथा लेखन के प्रेरक तत्त्व"। आर.आर.आई.जे.एम. पत्रिका।